International Journal of Academic Research and Development
ISSN: 2455-4197
Impact Factor: RJIF 5.22
www.academicsjournal.com
Volume 2; Issue 5; September 2017; Page No. 1080-1082

ग्लोबल गांव का देवता : शोषण का दस्तावेज

Dr. Reetu Rani
Assistant Professor, Department of Hindi, Govt. College Ambala Cantt, Haryana, India

प्रस्तावना

कथाकार रणेन्द्र का उपन्यास 'ग्लोब गाँव का देवता' वस्तुतः भारत के, विशेष रुप से झारखण्ड के एक आदिवासी समुदाय का अपने अस्तित्व, आत्मसम्मान और अस्मिता की रक्षा के लिए लम्बे संघर्ष और लगातार मिटते जाने की प्रक्रिया का संवेदनशील चित्रण है। पिछले वर्षों से भूण्डलीकरण के साथ जो धारणाएं भारत में आई हैं, उनमें से एक यह है कि विश्व अब एक ग्लोबल विलेज या ग्लोब गाँव बन गया है। व्यक्ति और समाज के जीवन हर प्रसंग में देशी –विदेशी का फर्क मिट गया है। लोभ और लूट से संचालित पूँजीवाद के भूमण्डलीकरण के दौर में भारत की प्रकृति और सम्पत्ति की लूट की खुली छूट मिली हुई है। प्रायः प्राकृतिक खनिज पदार्थ सबसे अधिक वही है, जहां आदिवासी रहते हैं। इसलिए आदिवासियों की जमीन और जिन्दगी खतरे में है। इस उपन्यास में इसी शोषण का चित्रण किया गया है।

झारखण्ड बनने के बाद राज्य सरकार द्वारा देशी–विदेशी पूंजीपतियों के स्वार्थ की रक्षा के लिए, अन्तर्राष्ट्रीय मुद्राकोष, विश्व बैंक और विश्व व्यापार संगठन के निर्देशन तथा केन्द्रीय सरकार के निर्देश पर आदिवासियों की जमीन हड़पने के उपक्रम में व्यापक हमला संगठित किया गया है। भूमि–हस्तांतरण तथा अवैध–कब्जे संविधान की 5वीं तथा 6ठीं अनूसूचियों, अधिसूचित–क्षेत्र नियंत्रण कानून, छोटानागपुर तथा संथाल परगना टेनेंसी ऐक्ट आदि के बावजूद हुए हैं। यह सिलसिला आज भी जारी है। आदिवासियों की जमीनें हड़पने के आम तरीकों में जमीन रेहन रखवाना, पट्टे पर देने के समझौता करना, बेनामी हस्तांतरण, राजस्व अधिकारियों के साथ मिलीभगत कर के झूठे अधिकार–पत्र बनवाना, अपने (बंधुआ) आदिवासी खेत–मज़दूरों के नाम कर के जमीनों पर कब्जा रखना आदि शामिल हैं। वर्तमान में भूण्डलीकरण दौर में आदिवासी समुदाय की सैंकड़ों एकड़ जमीन आज पूँजीपतियों के कब्जे मे है जिन पर बड़ी–बड़ी दुकानें और शॉपिंग मॉल बना दिए गए हैं।

समसामयिक भूमण्डलीकरण की अवधारणा नितान्त आधुनिक जीवन की परिघटना है जो 'वसुधैव कुटुम्बकम्' की परम्परागत अवधारणा से बिल्कुल अलग अर्थ और सन्दर्भों के साथ हमारे सामने आती है। भारतीय संदर्भ में इसका अर्थ है – विदेशी कम्पनियों को भारत की विभिन्न.... गतिविधियों में निवेश करने की अनुमति देकर अर्थव्यवस्था को विदेशी निवेश के लिए खोलना। विदेशी विनिमय अधिनियम जैसे कानूनों को, धीरे–धीरे प्रशुल्कों को समाप्त करना जिससे आयात उदारीकरण कार्यक्रमों को व्यापक आधार पर लागू किया जा सके तथा कई तरह के निर्यात प्रोत्साहन के स्थान पर विनिमय दर में परिवर्तनों द्वारा निर्यात को प्रोत्साहन देना।''[1]

वस्तुतः भूमण्डलीकरण ऐसी प्रक्रिया है जिसमें विश्व के एक क्षेत्र में घटित घटनाओं, निर्णयों और गतिविधियों के विश्व के दूसरे क्षेत्र में सार्थक परिणाम निकलते हैं। वैश्विक अर्थव्यवस्थाएं परस्पर नजदीक आती है, उनका एकीकरण होता है, जिसके परिणामस्वरुप विश्व–व्यापार, वित्त, निवेश तथा बहुराष्ट्रीय कम्पनियों के उत्पादन –नेटवर्क का विस्तार होता है।''[2]

सुधीश पचौरी भूमण्डलीकरण को विश्व–पूंजी का निरंकुश रुप मानते हैं। व्यापार संगठन और पेटेंटों के नियन्त्रण के रुप में पूंजीवाद ने बौद्धिक सम्पदा पर अपना आखिरी नियन्त्रण कायम कर लिया है।.... विश्व भर को बाजार बनाकर पूंजीवाद ने दुनिया भर के मनुष्य को उपभोक्ता में बदल दिया। उपभोक्तावाद भूण्डलीकरण का सांस्कृतिक सार है।''[3]

आज जिसे भूण्डलीकरण, वैश्वीकरण, जगतीकरण, नवसाम्राज्यवाद, विश्वव्यापी बाजारीकरण नवउदारवाद का विश्वव्यापी, पूंजीवाद, विश्वव्यापी बाजारीकरण, नवउदारवाद का विश्वव्यापी पूंजीवादी विस्फोट आदि नामों से जाना जाता है, जिसे न केवल आज का यथार्थ माना जाता है, बल्कि उसे आज के विश्व की विकल्पहीन, अपराजेय और अपरिवर्तनीय नियति बताया जा रहा है, उसे वास्तव में विश्वव्यापी कुविकास अथवा मानवता की उपलब्धियों के दुरुपयोग की दर्दनाक दास्तान के रुप में देखा जाना चाहिए।''[4]

भूमण्डलीकरण को एक ऐसी प्रक्रिया के रुप में प्रचारित किया गया है कि इससे राष्ट्र–राज्यों का (विभिन्न देशों और उनकी संस्कृतियों) पृथक अस्तित्व बेमानी हो गया है और दुनिया एक 'ग्लोबल गांव' बन गई है, जिसमें अब सर्वत्र और सर्वदा पूंजीवादी व्यवस्था ही चलेगी। 'ग्लोबल गांव' का यह मिथक दरअसल भूमण्डलीकरण की प्रक्रिया में सामने आ रहे श्रम और पूंजी के अंतर्विरोधी को छिपाने के लिए गढ़ा गया है। वास्तविकता यह है कि भूमण्डलीकरण के साथ राष्ट्र–राज्यों की संख्या कम नहीं हुई है, बल्कि बढ़ी हैं। आज आदिवासी जिस विकराल संकट का सामना कर रहे हैं, उसका मूल कारण है– राष्ट्र–राज्य की अपार ताकत और आतंकवादी हिंसक प्रवृत्ति। यद्यपि भूमण्डलीकरण की विचारधारा के रूप में जो उत्तरआधुनिकतावाद आया, उसने यह घोषणा की थी कि राष्ट्र–राज्य का अन्त हो गया है। लेकिन वास्तविकता यह है कि भूण्डलीकरण की प्रक्रिया को सफल बनाने और उसका विरोध करने वाली हर कोशिश को कुचलने के लिए राष्ट्र–राज्य कटिबद्ध है। 'ग्लोबल गांव के देवता' का लेखक यह जानता है, इसलिए ललिता के माध्यम से सोचता है कि ''राज्य–राष्ट्र की हिंसा का कोई जवाब नहीं हो सकता। उसका मानना था कि राज्य की नींव में ही केवल हिंसा की ईंटों से चिनाई हुई है। यही एक मात्र संस्था है जिसने हिंसा को भी सांस्थानिक रुप दिया है। उसकी सेना, सशस्त्र बल, पुलिस सब सैद्धान्तिक तौर पर हिंसा के लिए प्रशिक्षित हैं। राज्य–राष्ट्र अपने को सुरक्षित रखने के लिए इन्सानों का इन्सानों के द्वारा ही नाश करवाता है।''[5]

यद्यपि ''ग्लोबल गांव के देवता' के कथा के केन्द्र में झारखण्ड के कीकट क्षेत्र के असुर समुदाय का जीवन है, लेकिन उपन्यासकार यह जानता है कि जब से भारत में पूंजीवाद का भूण्डलीकरण आया है, तब से पूरे देश के आदिवासी समुदायों का सब कुछ, उनकी

प्रकृति, संस्कृति और जिन्दगी खतने में हैं, इसलिए वे आत्मरक्षा के लिए लड़ रहे हैं। इस उपन्यास में छत्तीसगढ़, मणिपुर, केरल, महराष्ट्र और मध्य–प्रदेश के आदिवासियों के संघर्ष की ओर संकेत है –''छत्तीसगढ़ के रायगढ़ जिले से होकर बहने वाली एक बड़ी नदी 'शिवनाथ' एक औद्योगिक समूह को बेच दी गई थी, उसका निजीकरण हो गया। कई–कई गांवों के लोग, मवेशी, चिरई–चुनमुन, खेत–बघार, सब पानी के लिए छछन रहे थे। बोन्दा टीकरागांव के लोग राजधानी में जाकर अनशन पर बैठे। नतीजतन ठीक गणतन्त्र दिवस के दिन सत्यभामा, शऊरा की भूख से मौत हो गई।''[6]

भूमण्डलीकरण के तीन चरण माने जाते हैं– सीधे साम्राज्यवादी दौर का भूमण्डलीकरण, दूसरे महायुद्ध के बाद का भूमण्डलीकरण और उच्च–पूंजीवादी व उच्च–तकनीकी (टेक्नॉलोजी) के मेल से बना और वैश्विक आर्थिक संस्थाओं व धनी देशों की बहुराष्ट्रीय कंपनियों की मार्फत फैला मौजूदा दौर का भूमण्डलीकरण। जब राष्ट्र–राज्य का 'ग्लोब गांव के देवताओं' से गठजोड़ होता है, तब वे दोनों जितने अधिक लालची होते हैं और उतने ही अधिक खतरनाक भी। उनके लाभ–लालच को बढ़ाने में विज्ञान उनकी मदद करता है– ''सामान्य तौर पर इन आकाशचारी देवताओं को जब अपने आकाश मार्ग से या सेटेलाइट की आंखों से छत्तीसगढ़, उड़ीसा, मध्यप्रदेश, झारखण्ड आदि राज्यों की खनिज सम्पदा, जंगल और अन्य संसाधन दिखते हैं तो उन्हें लगता है कि अरे, इन पर तो हमारा हक है। उन्हें मालूम है कि राष्ट्र–राज्य तो वे ही है, तो हक तो उनका ही हुआ। सो इन खनिजों पर, जंगलों में, घूमते हुए लँगोट, पहने असुर–बिरिजया, उरांव–मुंडा आदिवासी, दलित–सदान दिखते हैं तो उन्हें बहुत कोफ्त होती है। वे इन कीड़ों–मकौड़ों से जल्द निजात पाना चाहते हैं।''[7]

आज भूमण्डलीकरण द्वारा प्रायोजित विकास के 'मॉडल' में मीडिया तकनीक के क्षेत्र में भारी परिवर्तन हुए हैं। अखबार, रेडियो एवम् टेलिविजन से आगे आज इंटरनेट एवम् मोबाइल–युग के कान्सेप्ट सामने आ रहे हैं। मीडिया आज एक फलता–फूलता व्यवसाय हो गया है। प्रायः सभी देशों में बहुराष्ट्रीय निगमों ने पूंजी के बल पर मीडिया के सभी क्षेत्रों पर अपना स्वामित्व स्थापित कर लिया है। जब राष्ट्र–राज्य और पूंजीवाद की एकता के स्वागत में जनसंचार के माध्यमों के नगाड़े बनजे लगते हैं, तब विरोध का कोई भी विध्वंसवादी स्वर सुनाई नहीं देता।

आजकल भारत में यही हो रहा है। पूंजी की सत्ता की शक्ति ने मिलकर खनिज पदार्थों को हथियाने के लिए आदिवासी क्षेत्रों के जंगल और जमीन पर सम्मिलित रुप से हमला शुरु किया है –''दूसरे दिन अखबारों में इस नृशंस हत्याकांड की खबरें खोजने पर निराशा ही हाथ लगी, बाकी रूटीन खबरें थीं। नेताओं के वक्तव्य–आश्वासन नौकरशाही–स्वयंसेवी संस्थाओं की प्रेस–विज्ञप्तियों, विभिन्न पार्टियों के कार्यक्रमों की खबरें..... पाथर पाट में हुई पुलिस मुठभेड़ में छह नक्सली मारे गए। नक्सलियों में कुख्यात एरिया कमाण्डर बालचन भी शामिल। अन्त में इस बात का भी उल्लेख था कि भागते समय नक्सली लाशें उठा ले गए। पुलिस फोर्स लाशों की तलाश कर रही है।''[8]

भारत की सरकार उदारवादी नीति की मार्फत भारत को विश्व–बाजार का असहाय अंग बनाने में जुटी है और डब्ल्यू.टी.ओ. के प्रस्ताव को स्वीकार कृषि–क्षेत्र व प्राकृति संसाधनों को क्षत–विक्षत कर रही है। शहरी, धनिकों देशी उद्योगपतियों और कम्पनियों की घुसपैठ के कारण जल, जंगल, और जानवर से जुड़े लोगों के अनवरत शोषण का सिलसिला शुरू है।''[9]

उपन्यासकार ने इस उपन्यास में ग्लोबल गांव के दो देवताओं का उल्लेख किया है। पहला है– विदेशी वेदांग, कम्पनी है विदेशी पर नाम देशी। दूसरा देवता है –टाटा। उनके द्वारा होने वाले शोषण का चित्रण उपन्यासकार ने इस प्रकार किया है :–

''लेकिन बीसवीं सदी की हार हमारी असुर जाति की अपने पूरे इतिहास में सबसे बड़ी हार थी। इस बार कथा–कहानी वाले सिंगबोंगा ने नहीं, ने नहीं टाटा जैसी कम्पनियों ने हमारा नाश किया। उनकी फैक्टरियों में बना लोहा, कुदाल, खुरपी, गैंता, सुदूर हाटों तक पहुँचे गए। हमारे गलाये लोहे के औजारों की पूछ खत्म हो गया। मजबूरन पाट देवता की छाती पर हल चलाकर हमने खेती शुरु की, किन्तु बॉक्साइट के वैध–अवैध खदान, विशालकाय अजगर की तरह हमारी जमीन को निगलते बढ़ते आ रहे हैं।''[10]

असुर समाज बढ़ती गरीबी और भूख के कारण उस समुदाय की जवान लड़कियों में सम्पन्न जमीनदारों, नौकरशाहों, खदान के मालिकों और प्रभावशाली कारिन्दों की रखैलों के रुप में उनके हाथों का खिलौना बनने का उल्लेख भी इस उपन्यास में है। इसमें इस समुदाय के लोगों की चिन्ता इस प्रकार अभिव्यक्त हुई है –''लेकिन रूमझुम ने बताया कि यह शिकायत नहीं थी, बल्कि विलाप था। अन्दर से बहुत तरह टूट चुके समाज का विलाप। भूख और गरीबी ने अन्दर से इतना खोखला कर दिया है कि सामाजिक व्यवस्था भरभरा गई है। अखड़ा में बैगा–पाहन–उजार और गांव के बड़े–बूढ़ों की बात का वजन दिन–पर–दिन घटना जा रहा है। ठीक ही बात है कि घर में तीन–चार से ज्यादा का अनाज नहीं हो तो कौन बेटों को गांव छोड़ने और बेटियों को डेरे में काम के बहाने रखनी बनने से रोक सकता है?''[11]

'ग्लोबल गांव के देवता' में उपन्यासकार ने कोयलाश्रम के शिवदास बाबा और उनके कंटीधारी आन्दोलन के माध्यम से दिखावा है कि किस प्रकार बाबा अपने धार्मिक पाखण्डों से भोली–भाले असुर जनसमुदाय को उल्लू बना रहा है और बहुराष्ट्रीय कम्पनियों के साथ मिलकर अपना स्वार्थ सिद्ध कर रहा है–

''शिवदास बाबा और विधायक जी का यह सोचना सही था कि वेदांग जैसी बड़ी कम्पनी इस इलाके में केवल कंटीले तार की बाड़–बन्दी करने नहीं आई है। उसे अपनी फैक्ट्री के लिए कोयला बीघा अंचल में कई सौ एकड़ जमीन चाहिए। एम.पी. साहब ने दिल्ली में ही सेटिंग कर ली थी। वहीं छोटे काम के बहाने, इलाके को जानने–समझने–जीतने का त्रिसूत्री फॉर्मूला समझाकर ले आए थे। अब बाबा जी और विधायक जी के शेयर की सौदेबाजी होनी थी।''[12]

भूमण्डलीकरण के नाम पर राज्य व केन्द्रीय सरकारें, पूँजीपति वर्ग, अन्तर्राष्ट्रीय मुद्राकोष और विश्व व्यापार संगठन आपस में मिलकर युगों–युगों से शोषित से शोषित आदिवासी वर्ग का शोषण कर रहे हैं। बहुराष्ट्रीय कम्पनियां सरकार के साथ मिलकर इस वर्ग की प्राकृतिक सम्पदा व जमीन पर अपना कब्जा कर रही हैं तथा अपने उत्पादन को बढ़ावा दे रही हैं। यदि यह वर्ग अपने शोषण के विरुद्ध सामाजिक आन्दोलन या क्रान्त का आह्वान करता है, तो उन्हें 'माओवादी' या 'नक्सलवादी' कहकर उपद्रवी घोषित किया जाता है। कुल मिलाकर कहा जा सकता है कि आदिवासी क्षेत्रों में जो आधुनिक विकास कार्यक्रम चल रहे हैं, उनसे अनेक नई समस्याएं जन्म ले रहीं हैं। तकनीकी विकास के कारण राष्ट्र–राज्यों और बाहरी तत्त्वों की घुसपैठ आसान हो गई है। चतुर बाहरी तत्त्वों की घुसपैठ आसान हो गई है। चतुर बाहरी तत्त्व और राष्ट्र–राज्य आदिवासियों के उत्पादन के सभी साधनों पर धीरे–धीरे हावी हो जाते हैं और इसी शोषण की मार्मिक अभिव्यक्ति कथाकार रणेन्द्र के इस उपन्यास में मिलती है।

पुस्तक : ग्लोबल गांव के देवता (उपन्यास)
लेखक : रणेन्द्र
प्रकाशक : भारतीय ज्ञानपीठ, लोधी रोड़, नई दिल्ली–3

सन्दर्भ

1. एस. के. पुरी, भारतीय अर्थव्यवस्था, पृ.548
2. पी. जगदीश गांधी, ग्लेाबलाइज्ड इंडियन इकानामी कंटेम्पररी इश्यूज एण्ड इट्स पर्सपेक्टिव, पृ. 179
3. सुधीश पचौरी, उत्तर आधुनिक प्रस्थान बिन्दु (उपभोक्ता संस्कृति के चिह्न), पृ.12
4. कमलनयन काबरा, भूमण्डलीकरणः विचार, नीतियां और विकल्प, पृ. 81
5. रणेन्द्र, ग्लोबल गांव का देवता, पृ. 92
6. वही, पृ. 91
7. वही, पृ. 93
8. वही, पृ. 98
9. सं. मुकेश कुमार, सुधांशु शेखर, भूमण्डलीकरणः नीति और नियति, पृ. 93
10. रणेन्द्र, ग्लोबल गांव का देवता, पृ. 83–84
11. वही, पृ. 39
12. वहीं, पृ. 89